

अचेलत्व-सचेलत्व

बौद्ध-पिटकों में जगह-जगह किसी न किसी प्रसंग में 'निगंठो नातपुत्तो'^१ जैसे शब्द आते हैं । तथा 'निगंठा एकसाटका'^२ जैसे शब्द भी आते हैं । जैन आगमों को जानने वालों के लिए उक्त शब्दों का अर्थ किसी भी तरह कठिन नहीं है । भ० महावीर ही सूत्रकृतांग^३ जैसे प्राचीन आगमों में 'नायपुत्त' रूप से निर्दिष्ट हैं । इसी तरह आचारांग के अति प्राचीन प्रथम श्रुतस्कन्ध में अचेलक और एक वस्त्रधारी निर्ग्रन्थ-कल्प की भी बात आती है^४ । खुद महावीर के जीवन की चर्चा करने वाले आचारांग के नवम अध्यायन में भी महावीर के गृहामिनिष्क्रमण का वर्णन करते हुए कहा गया है कि उन्होंने शुरू में एक वस्त्र धारण किया था पर अमुक समय के बाद उसको उन्होंने छोड़ दिया और वे अचेलक बने ।^५ बौद्ध-ग्रन्थों में वर्णित 'एक शाटक निर्ग्रन्थ' पार्श्वनाथ या महावीर की परंपरा के ही हो सकते हैं, दूसरे कोई नहीं । क्योंकि आज की तरह उस युग में तथा उससे भी पुराने युग में निर्ग्रन्थ परंपरा के अलावा भी दूसरी अवधूत आदि अनेक ऐसी परंपराएँ थीं, जिनमें नग्न और सबसन त्यागी होते थे । परन्तु जब एक शाटक के साथ 'निगंठ' विशेषण आता है तब निःसंदेह रूप से बौद्ध ग्रन्थ निर्ग्रन्थ परंपरा के एक शाटक का ही निर्देश करते हैं ऐसा मानना चाहिए । यहाँ विचारणीय प्रश्न यह है कि निर्ग्रन्थ-परंपरा में अचेलत्व

१. मज्झिम० सुत्त ५६

२. अंगुत्तर Vol. ३. P. ३८४

३. सूत्रकृतांग १. २. ३. २२ ।

४. आचारांग-विमोहाध्ययन

५. आचारांग अ० ६

और सचेलत्व ये दोनों महावीर के जीवनकाल में ही विद्यमान थे या उनसे भी पूर्वकाल में प्रचलित पार्श्वपत्थिक परंपरा में भी थे ? महावीर ने पार्श्वपत्थिक परंपरा में ही दीक्षा ली थी और शुरू में एक वस्त्र धारण किया था । इससे यह तो जान पड़ता है कि पार्श्वपत्थिक परंपरा में सचेलत्व चला आता था । पर हमें जानना तो यह है कि अचेलत्व भ० महावीर ने ही निर्ग्रन्थ-परंपरा में पहले पहल दाखिल किया या पूर्ववर्ती पार्श्वपत्थिक-परंपरा में भी था, जिसको कि महावीर ने क्रमशः स्वीकार किया । आचारांग, उत्तराध्ययन जैसे प्राचीन ग्रन्थों में भ० महावीर की कुछ ऐसी विशेषताएँ बतलाई हैं जो पूर्ववर्ती पार्श्वपत्थिक परंपरा में न थीं, उनको भ० महावीर ने ही शुरू किया । भ० महावीर की जीवनी में तो इतना ही कहा गया है कि वे स्वीकृत वस्त्र का त्याग करके सर्वथा अचेल बने । पर उत्तराध्ययन सूत्र में केशि-गौतम-संवाद में पार्श्वपत्थिक-परंपरा के प्रतिनिधि केशी के द्वारा महावीर के मुख्य शिष्य गौतम के सम्मुख यह प्रश्न उपस्थित कराया गया है^१ कि भ० महावीर ने तो अचेलक धर्म कहा है और पार्श्वनाथ ने सचेल धर्म कहा है । जब कि दोनों का उद्देश्य एक ही है तब दोनों जिनों के उपदेश में अन्तर क्यों ? इस प्रश्न से स्पष्ट है कि प्रश्नकर्त्ता केशी और उत्तरदाता गौतम दोनों इस बात में एकमत थे कि निर्ग्रन्थ-परंपरा में अचेल धर्म भ० महावीर ने ही चलाया । जब ऐसा है तब इतिहास भी यही कहता है कि भ० महावीर के पहले ऐतिहासिक युग में निर्ग्रन्थ-परंपरा का केवल सचेल स्वरूप था ।

भ० महावीर ने अचेलता दाखिल की तो उनके बाह्य आध्यात्मिक व्यक्तित्व से आकृष्ट होकर अनेक पार्श्वपत्थिक और नए निर्ग्रन्थ अचेलक भी बने । तो भी पार्श्वपत्थिक-परंपरा में एक वर्ग ऐसा भी था जो महावीर के शासन में आना तो चाहता था पर उसे सर्वथा अचेलत्व अपनी शक्ति के बाहर जँचता था । उस वर्ग की शक्ति, अशक्ति और प्रामाणिकता का विचार करके भ० महावीर ने अचेलत्व का आदर्श रखते हुए भी सचेलत्व का मर्यादित विधान किया और अपने संघ को पार्श्वपत्थिक परंपरा के साथ जोड़ने का रास्ता खोल दिया । इसी मर्यादा में भगवान् ने तीन से दो और दो से एक वस्त्र रखने को भी कहा है ।^२ एक वस्त्र रखनेवाले के लिए आचारांग में^३ एक शाटक ही

१. उत्त० २३ १३.

२. देखो पृ० ८८. टि० ४.

३. आचारांग ७. ४. २०६

शब्द है जैसा बौद्ध पिटकों में^१ भी है। इस तरह बौद्ध पिटकों के उल्लेखों और जैन आगमों के वर्णनों का मिलान करते हैं तो यह मानना ही पड़ता है कि पिटक और आगमों का वर्णन सचमुच ऐतिहासिक है। यद्यपि भ० महावीर के बाद उत्तरोत्तर सचेतता की और निर्ग्रन्थों की प्रवृत्ति बढ़ती गई है तो भी उसमें अचेतत्व रहा है और उसी की प्रतिष्ठा मुख्य रही है। इतनी ऐतिहासिक चर्चा से हम निम्नलिखित नतीजे पर निर्विवाद रूप से पहुँचते हैं—

१—भ० महावीर के पहले इतिहासयुग में निर्ग्रन्थ-परंपरा सचेत ही थी।

२—भ० महावीर ने अपने जीवन के द्वारा ही निर्ग्रन्थ-परंपरा में अचेतत्व दाखिल किया। और वही निर्ग्रन्थों का आदर्श स्वरूप माना जाने लगा तो भी पार्श्वोपत्यिक-परंपरा के निर्ग्रन्थों को अपनी नई परंपरा में मिलाने की दृष्टि से निर्ग्रन्थों के मर्यादित सचेतत्व को भी स्थान दिया गया, जिससे भ० महावीर के समय में निर्ग्रन्थ-परंपरा के सचेत और अचेत दोनों रूप स्थिर हुए और सचेत में भी एकशाटक ही उत्कृष्ट आचार माना गया।

३—भ० महावीर के समय में या कुछ समय बाद सचेतत्व और अचेतत्व के पक्षपातियों में कुछ खींचातानी या प्राचीनता-अर्वाचीनता को लेकर वाद-विवाद होने लगा, तब भ० महावीर ने या उनके समकालीन शिष्यों ने समाधान किया कि अधिकार भेद से दोनों आचार ठीक हैं, यद्यपि प्राचीनता की दृष्टि से तो सचेतता ही मुख्य है, पर अचेतता नवीन होने पर भी गुणदृष्टि से मुख्य है।

सचेतता और अचेतता के बीच जो सामंजस्य हुआ था वह भी महावीर के बाद करीब दो सौ—दोई सौ साल तक बराबर चलता रहा। आगे दोनों पक्षों के अभिनिवेश और खींचातानी के कारण निर्ग्रन्थ-परंपरा में ऐसी विकृतियाँ आईं कि जिनके कारण उत्तरकालीन निर्ग्रन्थ-वाङ्मय भी उस मुद्दे पर विकृत-सा हो गया है।

(३)

तप

बौद्ध-पिटकों में अनेक जगह 'निगंठ' के साथ 'तपस्सी', 'दीघ तपस्सी' ऐसे विशेषण आते हैं, इस तरह कई बौद्ध सुत्तों में राजगृही आदि जैसे स्थानों में तपस्या करते हुए निर्ग्रन्थों का वर्णन है, और खुद तथागत बुद्ध के द्वारा की गई

१. देखो पृ० ८८, टि० २